सरस्वती

वर्ष : 6 अंक : 1 अप्रैल-जून, 2025 (विक्रम संवत 2082)

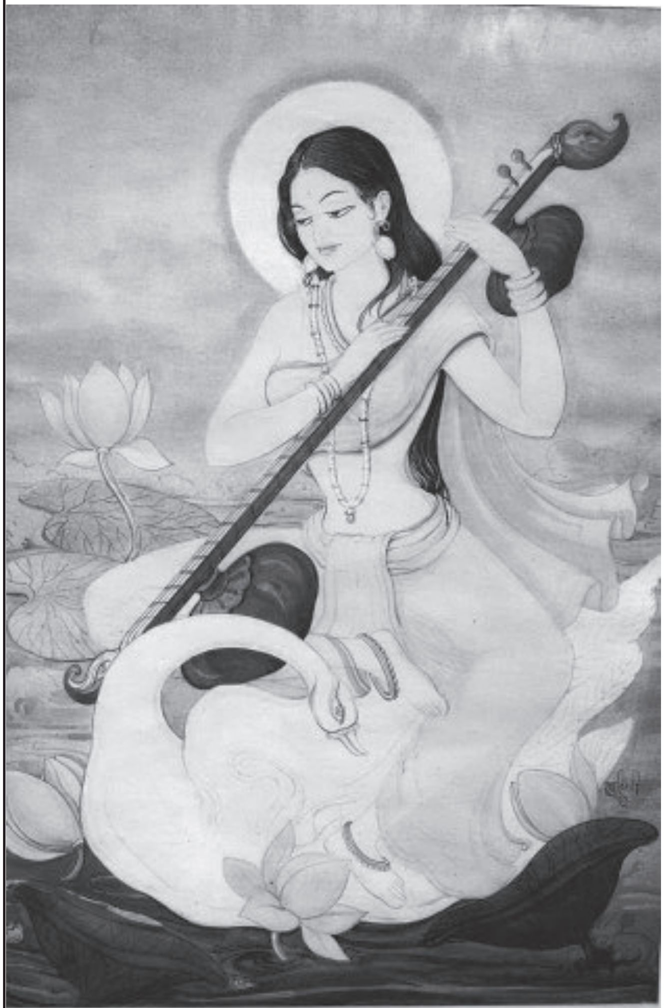

चित्रांकन - सुप्रसिद्ध चित्रकार प्रो. श्याम बिहारी अग्रवाल

संस्थापक
चिंतामणि घोष

प्रबंध निदेशक
सुप्रतीक घोष

संरक्षक
महेशचंद्र चट्टोपाध्याय

आदि संपादक
बाबू श्यामसुंदर दास

युग-प्रवर्तक संपादक
आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी

संपादक
रविनन्दन सिंह
अनुपम परिहार

संपादकीय कार्यालय
इंडियन प्रेस पब्लिकेशंस प्रा. लि.
36, पन्नालाल मार्ग,
प्रयागराज - 211 002
मो. : 9936660887
ईमेल : saraswati.indianpress@gmail.com

यह अंक
सौ रुपये मात्र

वार्षिक
पाँच सौ पचास रुपये (डाक खर्च सहित)
(व्यक्तियों के लिए, चार अंक के लिए)

सात सौ रुपये (डाक खर्च 40 रुपये अतिरिक्त)
(संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए, चार अंक के लिए)

विदेश के लिए
पचास डॉलर प्रति वर्ष (चार अंक के लिए)

(कृपया भुगतान **'इंडियन प्रेस पब्लिकेशंस प्रा.लिमिटेड'** के नाम
डिमांड ड्राफ्ट/चेक/धनादेश से प्रबंधकीय कार्यालय के पते पर भेजें)
NEFT द्वारा भेजने के लिए बैंक-
Punjab National Bank
A/c No. : 0270050001483
IFSC : PUNB0027020
धनादेश अथवा बैंक-स्थानांतरण का संदर्भ
व्हाट्सएप नम्बर 09936660887 पर सूचित करें

आवरण चित्र - गरिमा सक्सेना
रेखांकन - अशोक अंजुम
अक्षर संयोजन - शरद कुमार अग्रवाल, ऑन लाइन कम्प्यूटर सर्विसेज़
अक्षर संशोधन - डॉ. हिमांगी त्रिपाठी

Saraswti A quarterly journal of Hindi,
Printed by Indian Press Publications Pvt. Ltd.,
36, Panna Lal Marg, Prayagraj-211001
Uttar Pradesh, India

रचनाकारों से आग्रह है कि कृपया अपनी रचनों सरस्वती के मेल saraswati.indianpress@gmail.com पर ही भेजें

'सरस्वती' पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं में आने वाले विचार रचनाकारों के अपने हैं। उनसे सम्पादकीय सहमति की आवश्यकता नहीं है। 'सरस्वती' से सम्बन्धित किसी प्रकार के वाद का परिक्षेत्र प्रयागराज/इलाहाबाद होगा।

अनुक्रम

संपादकीय रविनन्दन सिंह ... 5

धरोहर

1. बौद्धाचार्य शीलभद्र — महावीर प्रसाद द्विवेदी ... 7

आलेख

1. बाल साहित्य के बदलते आयाम — सुरेन्द्र विक्रम ... 10
2. प्रेमचंद का 'रंगभूमि' उपन्यास क्या दलित विरोधी — राजेद्र सिंह गहलौत ... 25
3. लोक कथाओं का परकाया प्रवेश — सत्य प्रिय पाण्डेय ... 28
4. प्रेम और मैत्री एक मीमाँसा — स्कन्द शुक्ल ... 33
5. तुलसी की काव्य कला और पार्वती मंगल — कृष्ण बिहारी पाठक ... 36
6. झूठा नाता जगत का, झूठा है घर बार — उज्ज्वल कुमार सिंह ... 41

कहानी

1. आदी — राजा सिंह ... 48
2. आत्म-तर्पण — संजय कुमार सिंह ... 54
3. मुलाकात — जूही ... 59
4. पथिक — हेमा जोशी ... 63
5. कार्यालय की मीटिंग — अखिलेश चन्द्र ... 69
6. बेवकूफ — अखिलेश श्रीवास्तव चमन ... 76

सिनेमा

1. हिन्दी सिनेमा और भारतीय समाज — सुभाष शर्मा ... 84

लघुकथा

1. बदलता समय — संदीप तोमर ... 104

ललित निबंध

1. पानी बहुत नीचे चला गया है — उमेश प्रसाद सिंह ... 105

आलेख

झूठा नाता जगत का, झूठा है घर बार

उज्ज्वल कुमार सिंह

स्त्री मुक्ति का प्रश्न भारतीय समाज में एक जटिल और बहुआयामी विमर्श का हिस्सा रहा है। इतिहास में स्त्रियों को सामाजिक, धार्मिक और पारिवारिक बंधनों में बांधकर उनकी स्वतंत्रता को सीमित करने के प्रयास किये गये, लेकिन कुछ स्त्रियों ने इन बाधाओं को तोड़ते हुए अपनी अस्मिता और स्वतंत्रता की घोषणा की। भक्ति आंदोलन के दौरान महिला संत कवयित्रियों ने अपने काव्य और साधना के माध्यम से सामाजिक बंधनों को चुनौती दी और स्त्री स्वायत्तता के नये प्रतिमान स्थापित किये। इस शोध आलेख में हम स्त्री मुक्ति के प्रश्न को महिला संत कवयित्रियों के काव्य के संदर्भ में समझने का प्रयास करेंगे।

भक्ति आंदोलन ने भारतीय समाज में धार्मिक और सामाजिक पुनर्जागरण का कार्य किया। इस आंदोलन ने जाति, लिंग और वर्ग के भेदभाव को अस्वीकार करते हुए एक समतामूलक समाज की कल्पना की। इस आंदोलन के अंतर्गत अनेक महिला संत कवयित्रियों ने अपने काव्य में स्त्री की आत्मनिर्भरता, सामाजिक स्वतंत्रता और आध्यात्मिक उत्थान का संदेश दिया। इनमें प्रमुख रूप से मीराबाई, लल्लेश्वरी, सहजोबाई, दयाबाई और बहिनाबाई का नाम लिया जाता है। भारत में स्त्री मुक्ति का प्रश्न सदियों से विचारणीय रहा है। प्राचीन काल में स्त्रियों को पुरुषों के अधीनस्थ माना जाता था, लेकिन कुछ ऐतिहासिक घटनाएँ और आंदोलनों ने इस धारणा को चुनौती दी। भक्ति आंदोलन एक ऐसा दौर था जब समाज के पारंपरिक बंधनों को तोड़ने की प्रक्रिया शुरू हुई। इस आंदोलन में संत कवयित्रियों ने स्त्री की स्वतंत्रता और आध्यात्मिक चेतना को स्वर दिया।

स्त्री मुक्ति का प्रश्न भारतीय समाज में गहरे सामाजिक और दार्शनिक विमर्श से जुड़ा हुआ है। प्राचीन काल से लेकर वर्तमान तक, स्त्रियों की स्थिति को लेकर विभिन्न अवधारणाएँ और विचारधाराएँ प्रस्तुत की गई हैं। भारतीय परंपरा में स्त्रियों की स्थिति द्वंद्वात्मक रही है—जहाँ एक ओर उन्हें देवी के रूप में पूजा गया, वहीं दूसरी ओर उन्हें पारिवारिक और सामाजिक बंधनों में बाँधकर उनके अधिकारों को सीमित किया गया। प्राचीन भारतीय समाज में स्त्रियाँ परिवार और समाज की आधारशिला मानी जाती थीं। ऋग्वेद में गार्गी और मैत्रेयी जैसी विदुषियों का उल्लेख मिलता है, जिन्होंने ज्ञान और दर्शन के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। लेकिन समय के साथ समाज में स्त्रियों की स्थिति में गिरावट आई, और वे घरेलू दायरे तक सीमित कर दी गईं। मध्यकाल में यह स्थिति और जटिल हो गई जब पितृसत्तात्मक व्यवस्था ने स्त्रियों की स्वतंत्रता को नियंत्रित करने के लिये कठोर सामाजिक मानदंड स्थापित किये।

भक्ति आंदोलन के उदय ने इस स्थिति को चुनौती दी। यह आंदोलन जाति, धर्म और लिंग के आधार पर भेदभाव को अस्वीकार करता था और समानता तथा प्रेम के सिद्धांतों पर आधारित था। इस आंदोलन के अंतर्गत अनेक महिला संत कवयित्रियों ने अपने काव्य में स्त्री की आत्मनिर्भरता, सामाजिक स्वतंत्रता और आध्यात्मिक उत्थान

का संदेश दिया। उन्होंने यह प्रमाणित किया कि आध्यात्मिकता और भक्ति किसी जाति, वर्ग या लिंग की बपौती नहीं है। दार्शनिक दृष्टि से, स्त्री मुक्ति का प्रश्न आत्मबोध और अस्तित्व के बोध से जुड़ा हुआ है। भारतीय दर्शन में अद्वैत वेदांत, बौद्ध और जैन परंपराओं ने आत्मज्ञान को मुक्ति का मार्ग बताया है। महिला संत कवयित्रियों ने इसी आत्मबोध को अपने काव्य में अभिव्यक्त किया और सामाजिक बंधनों से परे जाकर अपनी स्वतंत्र अस्मिता की खोज की।

'मुक्ति' एक व्यापक और बहुआयामी अवधारणा है, जिसका महत्त्व राजनीति, धर्म, दर्शन, समाज और साहित्य जैसे विभिन्न क्षेत्रों में देखा जाता है। अंतर केवल इतना है कि कहीं इसे लक्ष्य (साध्य) माना गया है तो कहीं इसे लक्ष्य तक पहुँचने का माध्यम (साधन)। राजनीति का उद्देश्य परतंत्रता से मुक्ति दिलाकर स्वतंत्रता की रक्षा करना है। धर्म, मनुष्य को कर्तव्य पालन के लिये प्रेरित करता है ताकि वह अनुचित आचरण से बचते हुए ईश्वर की ओर अग्रसर हो सके। इसी कारण, नैतिकता को विकसित करने के लिये पाप और पुण्य की अवधारणाएँ निर्मित की गईं, जिससे परपीड़न की प्रवृत्ति समाप्त हो और समाज में समरसता व संतुलन बना रहे। मनुष्य को तामसिक वृत्तियों से मुक्त होकर आदर्श अवस्था प्राप्त करनी चाहिए। स्वभाव से ही मनुष्य बंधनों का विरोधी रहा है, और यह भी एक सार्वभौमिक सत्य है। दर्शनशास्त्र भी मुक्ति की अवधारणा से गहराई से जुड़ा हुआ है और हर प्रकार के बंधनों के विरुद्ध खड़ा है। भारतीय दर्शन परंपरा में मुक्ति का प्रश्न केंद्रीय स्थान रखता है, और दार्शनिकों का मानना है कि उनके विचारों की प्रासंगिकता इसी में निहित है कि वे मनुष्य को मुक्ति की दिशा में आगे बढ़ने में सहायता प्रदान कर सकते हैं।

'मुक्ति' न केवल राजनीति, धर्म और दर्शन का विषय है, बल्कि यह संस्कृति और साहित्य का भी केंद्रीय उद्देश्य है। संस्कृति का कार्य मनुष्य को संस्कारित करना है, लेकिन समय के साथ जब कुछ परंपराएँ रूढ़ियों में बदल जाती हैं, तो उनसे मुक्ति पाना आवश्यक हो जाता है ताकि मानव सभ्यता का सतत विकास संभव हो सके। यह प्रक्रिया कभी सहज रूप से तो कभी सामाजिक और ऐतिहासिक संघर्षों के बीच तीव्र गति से घटित होती है। साहित्य, विशेष रूप से कविता, संस्कृति का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने 'कविता क्या है' विषय पर लिखते हुए इसे हृदय की मुक्ति का साधन बताया है। उनके अनुसार, जिस प्रकार आत्मा की मुक्तावस्था ज्ञान कहलाती है, उसी प्रकार हृदय की मुक्तावस्था रस की अनुभूति में प्रकट होती है। कविता, मन के विकारों को स्वतः दूर करने में सक्षम होती है, ठीक वैसे ही जैसे योगी साधना के माध्यम से मानसिक शुद्धि प्राप्त करता है। कविता केवल व्यक्तिगत अनुभूतियों तक सीमित नहीं रहती, बल्कि साधारणीकरण के माध्यम से ये भाव व्यापक रूप से समाज में प्रसारित होते हैं। यही कारण है कि सैकड़ों वर्ष पूर्व रचित कविताएँ भी आज समकालीन प्रतीत होती हैं। साहित्य का प्रभाव मनुष्य के आंतरिक और बाह्य जीवन पर पड़ता है। यह भावयोग का साधन है, जो मन से निकलकर सीधे मन को प्रभावित करता है। साहित्य की दृष्टि व्यापक और समावेशी होती है—यह समभाव को जन्म देता है और मनुष्य के भीतर मानवीय गुणों का विकास करता है। यह क्रूर को कोमल, कृपण को उदार, आलसी को कर्मठ और भयभीत को निर्भय बनाने की क्षमता रखता है।

सहजोबाई एक प्रतिष्ठित और सम्मानित संत कवयित्री हैं, जिनके नाम, भक्ति और काव्याभिव्यक्ति में अद्भुत समानता दिखाई देती है। उनकी तुलना अक्सर मीराबाई से की जाती है और उन्हें 'अठारहवीं सदी की मीरा' कहा गया है, संभवतः उनकी भक्ति-प्रसिद्धि के कारण। लेकिन सहजोबाई की काव्याभिव्यक्ति में मीराबाई की तरह स्त्री-पराधीनता की यातनापूर्ण अनुभूति या उससे मुक्त होने की तीव्र अभिव्यक्ति नहीं मिलती। उनके काव्य में न तो पितृसत्तात्मक समाज की विभेदजनित विसंगतियों की पीड़ा प्रकट होती है और न ही उनके जीवन-वृत्तांत में किसी

प्रकार के संघर्ष का उल्लेख मिलता है। उनकी छवि समकालीन समाज में धर्मसत्ता से जुड़ी आचार्य परंपरा जैसी प्रभावशाली प्रतीत होती है। उन्होंने गुरु के प्रति पूर्ण समर्पण की परंपरा को आगे बढ़ाया और भक्ति के प्रचार-प्रसार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। अपने समय में वे अत्यंत सम्मानित थीं। किंवदंतियों के अनुसार, मुगल बादशाह शाह आलम द्वितीय ने उनकी भक्ति और काव्य साधना से प्रभावित होकर उन्हें 1100 स्वर्ण मुद्राएँ और 'बन्थला' नामक गाँव सम्मानस्वरूप प्रदान किया था। स्पष्ट है कि जब उन्हें स्वयं बादशाह की मान्यता प्राप्त थी, तो जनता के बीच उनकी प्रतिष्ठा कितनी व्यापक और दृढ़ रही होगी।

बलदेव वंशी, जो संत-साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान हैं, के अनुसार सहजोबाई का जन्म विक्रमी संवत् 1782 (श्रावण पंचमी, जुलाई 1725 ई.) को दिल्ली के परीक्षितपुरा नामक स्थान पर हुआ और उनकी मृत्यु विक्रमी संवत् 1862 (1805 ई.) में हुई। हालाँकि, अन्य स्रोतों में उनके जन्म और मृत्यु के क्रमशः 1683 ई. और 1763 ई. होने का उल्लेख मिलता है। लेकिन इन तिथियों पर अधिक उलझने का कोई विशेष लाभ नहीं है, क्योंकि इतिहास मुख्यतः राजाओं और सत्ताधीशों द्वारा लिखा जाता है, न कि सामान्यजन के जीवन-वृत्त को केंद्र में रखकर। मुगलकाल में किसी स्त्री का प्रतिष्ठित संत-कवयित्री के रूप में स्वीकृत होना एक महत्त्वपूर्ण घटना थी, जो सहजोबाई की भक्ति और विद्वत्ता की पुष्टि करती है। उनके प्रसिद्ध ग्रंथ सहजप्रकाश का प्रकाशन प्रयाग स्थित वेलवेडियर प्रेस से हुआ था, जिसमें उन्होंने अपना स्व-परिचय भी प्रस्तुत किया है।

हरिप्रसादकीसुता, नामहैसहजोबाई।
दूसरकुलमेंजन्म, सदागुरुचरणसहाई।
चरणगुरुदेवसेवमोहिआँगनबसायौ।
जोजुगतसोदुर्लभ, सुलभकरिदृष्टिदिखायो।

उक्त छंद में सहजोबाई की गुरु के प्रति गहरी भक्ति का स्पष्ट चित्रण मिलता है। उन्होंने गुरु चरणदास के सान्निध्य में रहकर जीवन, संसार और ब्रह्म का ज्ञान प्राप्त किया तथा भक्ति की गहन अनुभूतियों को अपने काव्य में अभिव्यक्त किया। अन्य संतों की भाँति उनके लिये भी गुरु का स्थान ईश्वर से उच्चतर था, क्योंकि गुरु ही मोक्ष प्राप्ति का मार्ग दिखाते हैं। इस कारण वे अपनी संपूर्ण निष्ठा और समर्पण गुरुचरणों में अर्पित कर देती हैं।

चरणदासकीशिष्यदृढ़, सहजोबाईजान।
ताकीजोगुरुभक्तिपर, जोगजीतकुर्बान?

सहजोबाई के मन में अपने गुरु के प्रति अत्यंत गहरा श्रद्धाभाव था। उनके विचार में गुरु की भक्ति से श्रेष्ठ कोई अन्य भक्ति नहीं हो सकती। उन्होंने अपना संपूर्ण अस्तित्व गुरुचरणों में समर्पित कर दिया था। उनके लिये गुरु केवल परमात्मा का स्वरूप नहीं थे, बल्कि वे उन्हें परमात्मा से भी अधिक महत्त्वपूर्ण मानती थीं। वे निरंतर गुरु द्वारा सिखाये गये मार्ग का अनुसरण करतीं, मन ही मन उनका स्मरण करतीं और शांति से उनके उपदेशों को आत्मसात करती थीं। न केवल वे स्वयं गुरुवचनों का पालन करतीं, बल्कि अन्य लोगों को भी गुरुमत का मार्ग समझाने में संलग्न रहतीं। उनकी भक्ति इतनी प्रबल थी कि उनके जीवन में गुरु के अतिरिक्त कुछ भी उन्हें प्रिय नहीं था। जिस प्रकार एक योद्धा विजय प्राप्त करने के संकल्प के साथ युद्धभूमि में उतरता है, उसी प्रकार सहजोबाई भी अपने आध्यात्मिक लक्ष्य को पाने के लिये संपूर्ण निष्ठा से गुरुभक्ति में लीन हो गईं। उनका अपने गुरु में अटूट विश्वास दूसरों के लिये प्रेरणा का स्रोत बन गया। गुरु की शरण में आने के बाद सहजोबाई पूरी तरह गुरुभक्ति में लीन हो गईं। उनके जीवन का आधार गुरुभक्ति और गुरु के उपदेशों का पालन बन गया। घनश्यामदास जी के अनुसार, उनकी भक्ति इतनी प्रगाढ़ हो गई कि वे कई-कई दिनों तक समाधि में तल्लीन रहती थीं। सतगुरु की कृपा से उन्होंने प्रेम, विश्वास, लगन और उत्साह के साथ पाँच वर्षों तक निरंतर साधना की, जिससे उन्हें आत्मिक पूर्णता प्राप्त हो गई। डॉ. श्यामसुंदर शुक्ल के मतानुसार,

सहजोबाई ने अष्टांग योग और नवधा भक्ति में सिद्धि प्राप्त कर ली थी। सहज समाधि की अवस्था तक पहुँचने के बाद वे त्रिलोकदर्शी बन गई थीं, जिसका संकेत वे अपनी वाणी में भी करती हैं।

सहजोगुरुदीपकदियौ, रोमरोमउजियार।
तीनलोकदृष्टाभये, मिटयौभरमअँधियार?

सहजोबाई की आध्यात्मिक यात्रा में गुरु की कृपा का अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान रहा। गुरु के दिए गये ज्ञान ने उनके अंतःकरण को पूरी तरह प्रकाशित कर दिया और अज्ञान, मोह व सांसारिक भ्रम का अंधकार मिट गया। उनका जीवन भक्ति, साधना और आत्मिक उन्नति की दिशा में पूरी तरह समर्पित हो गया। उन्होंने सतगुरु के उपदेशों को आत्मसात करते हुए आत्मबोध की उच्च अवस्था प्राप्त की, जिससे उनके चित्त में गहन शांति और निर्मलता आ गई।

सहजोगुरुदीपकदियौ, नैनाभयेअनन्त।
आदिअन्तमधएकही, सूझिपड़ेंभगवन्त?

गुरु के मार्गदर्शन में सहजोबाई ने गहन साधना की, जिससे उन्हें न केवल आत्मज्ञान प्राप्त हुआ, बल्कि उनके अंतःदृष्टि का विकास भी हुआ। वे संसार के पारंपरिक बंधनों से मुक्त होकर आध्यात्मिक चेतना में विलीन हो गईं। साधना की उच्च अवस्था तक पहुँचने के कारण उन्हें त्रिलोकदर्शी होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, अर्थात् वे तीनों लोकों—भूतल, पाताल और स्वर्गलोक—का प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करने में सक्षम हुईं। यह केवल एक आध्यात्मिक उपलब्धि नहीं थी, बल्कि उनकी भक्ति और तपस्या का प्रमाण भी था। सहजोबाई की इस सिद्धि का उल्लेख उनके काव्य में भी मिलता है, जहाँ वे आत्मज्ञान की अवस्था का वर्णन करती हैं। वे कहती हैं कि गुरु के ज्ञान ने उनके भीतर दिव्य प्रकाश उत्पन्न किया, जिससे वे सृष्टि के समस्त रहस्यों को समझने में सक्षम हुईं। यह ज्ञान उन्हें किसी बाहरी स्रोत से नहीं मिला, बल्कि सतत साधना और गुरुकृपा से प्राप्त हुआ। इस अवस्था में पहुँचकर उन्होंने सांसारिक मोह-माया को त्याग दिया और आत्मिक सुख को ही सर्वोपरि माना। उनके लिये गुरु का ज्ञान ही सच्चा प्रकाश था, जिसने उन्हें इस लोक और परलोक दोनों की सच्चाइयों से परिचित कराया।

सहजोबाई की आध्यात्मिक साधना और उनके विचारों की गहराई को उनके इस दोहे से स्पष्ट रूप से समझा जा सकता है—

यहअवसरदुर्लभमिलै, अचरजमनुषादेह।
लाभयहीसहजोकहै, हरिसुमिरनकरिलेह?

उनके अनुसार, यह मनुष्य जन्म कोई साधारण उपलब्धि नहीं है, बल्कि एक दुर्लभ अवसर है, जिसे ईश्वर भक्ति और साधना के माध्यम से सार्थक बनाया जा सकता है। उनकी सोच में यह दृढ़ विश्वास दिखाई देता है कि मनुष्य योनि में जन्म लेना मात्र भाग्य की बात नहीं है, बल्कि यह ईश्वर द्वारा दिया गया एक अनमोल उपहार है, जिसे व्यर्थ नहीं गँवाना चाहिए। सहजोबाई संत परंपरा की उन महान कवयित्रियों में से एक थीं, जिन्होंने भक्ति को अपने जीवन का एकमात्र लक्ष्य माना। वे मानती थीं कि संसार में जन्म लेकर अगर मनुष्य ईश्वर का सुमिरन नहीं करता और सांसारिक बंधनों में उलझा रहता है, तो उसका यह दुर्लभ जीवन व्यर्थ चला जाता है। इसलिये वे सभी को ईश्वर-भजन और साधना का मार्ग अपनाने की प्रेरणा देती हैं। उनकी यह सोच भक्ति आंदोलन के मूल सिद्धांतों से जुड़ी हुई है, जहाँ जाति, लिंग, वर्ग आदि के भेद मिटाकर हर व्यक्ति को आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने के लिये प्रेरित किया गया। सहजोबाई के इस दोहे में मानव जीवन को एक दिव्य अवसर के रूप में देखा गया है। वे इसे 'अचरज' यानी विस्मयकारी मानती हैं, क्योंकि यह जीवन क्षणभंगुर होते हुए भी ईश्वर प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करता है। उनके अनुसार, हरि-सुमिरन ही इस जीवन का सर्वोच्च लाभ है, क्योंकि मृत्यु के पश्चात् केवल ईश्वर भक्ति ही साथ जाती है, न कि सांसारिक संपत्ति या अन्य उपलब्धियाँ। यह विचार संत कबीर, तुलसीदास और अन्य भक्त कवियों

की वाणी से भी मेल खाता है, जिन्होंने सांसारिक मोह-माया से ऊपर उठकर भक्ति को ही जीवन का परम उद्देश्य बताया है। सहजोबाई सांसारिक बंधनों को आत्मा की मुक्ति में सबसे बड़ा अवरोध मानती हैं। वे इस दोहे के माध्यम से साधकों को यह संदेश देती हैं कि जब तक समय है, तब तक हरि-स्मरण कर लेना चाहिए, क्योंकि यह अवसर बार-बार नहीं मिलता। उनकी भक्ति मार्ग में दृढ़ आस्था थी, जिसमें सांसारिक बंधनों से मुक्त होकर परमात्मा की ओर बढ़ने की प्रेरणा मिलती है। सहजोबाई का यह दोहा हमें यह सिखाता है कि मनुष्य जन्म दुर्लभ है और इसे व्यर्थ न जाने देना ही सच्ची बुद्धिमत्ता है। भक्ति मार्ग के प्रति उनकी निष्ठा और उनकी आध्यात्मिक सोच हमें यह प्रेरणा देती है कि जीवन को सार्थक बनाने के लिये हमें अपने मन, वचन और कर्म से ईश्वर की आराधना करनी चाहिए।

झूठानाताजगतका, झूठाहैघरबास।
यहतनझूठादेखकर, सहजोभईउदास?

सहजोबाई के इस दोहे में संसार की नश्वरता और असारता पर गहरा चिंतन प्रकट हुआ है। वे कहती हैं कि इस संसार में जो भी नाते-रिश्ते हैं, वे सभी झूठे हैं, क्योंकि वे केवल सांसारिक स्वार्थों पर टिके हुए हैं। इसी तरह, घर-परिवार, धन-संपत्ति, शरीर आदि सभी अस्थायी हैं। यह जीवन क्षणभंगुर है और इस नश्वरता को देखकर सहजोबाई व्यथित हो जाती हैं। इस दोहे में उनकी वैराग्य भावना स्पष्ट झलकती है। वे संसार को माया का जाल मानती हैं, जहाँ लोग क्षणिक सुखों के पीछे भागते हैं, लेकिन अंततः उन्हें खाली हाथ जाना पड़ता है। वे देखती हैं कि मनुष्य अपने रिश्तों, घर-परिवार और शरीर पर गर्व करता है, लेकिन जब मृत्यु का समय आता है, तो यह सब कुछ यहीं रह जाता है। यही कारण है कि वे संसार की इस अस्थिरता को देखकर उदास हो जाती हैं।

सहजोबाई का यह दोहा भारतीय संत साहित्य की उस परंपरा से जुड़ा हुआ है, जिसमें संसार को एक मिथ्या स्वप्न की तरह देखा गया है। संत कबीर, तुलसीदास और मीराबाई जैसे भक्त कवियों ने भी संसार की क्षणभंगुरता को उजागर किया है। सहजोबाई यहाँ स्पष्ट रूप से कहती हैं कि न केवल सांसारिक संबंध झूठे हैं, बल्कि स्वयं शरीर भी झूठा है। शरीर एक दिन नष्ट हो जाएगा, और तब यह घर, परिवार, सुख-संपत्ति कुछ भी साथ नहीं जाएगा। सहजोबाई का यह दोहा केवल निराशा की अभिव्यक्ति नहीं है, बल्कि यह एक गहरी आध्यात्मिक चेतना का आह्वान भी करता है। वे यह संदेश देना चाहती हैं कि जब यह संसार और शरीर नश्वर हैं, तो मनुष्य को भौतिक सुखों की बजाय ईश्वर-भक्ति की ओर बढ़ना चाहिए। आत्मा ही शाश्वत है और इसलिये व्यक्ति को सांसारिक मोह से हटकर परमात्मा की साधना करनी चाहिए। उनके इस दोहे में भौतिकता की निरर्थकता और ईश्वर-भक्ति की महत्ता का बोध कराया गया है। वे संसार के झूठे आकर्षणों से विरक्त होकर भक्ति मार्ग की ओर बढ़ने की प्रेरणा देती हैं।

वे जीवन की अस्थिरता और क्षणभंगुरता को नदी के प्रवाह से तुलना करती हैं। जिस प्रकार कोई नदी कभी नहीं ठहरती, वैसे ही यह संसार और इसमें आने वाले लोग भी स्थायी नहीं हैं। समय के प्रवाह में सब कुछ बदलता रहता है—लोग आते हैं, चले जाते हैं, परंतु यह जीवनरूपी यात्रा कभी नहीं थमती। हर क्षण कुछ न कुछ बदलता रहता है, और कोई भी व्यक्ति या वस्तु यहाँ सदा के लिये नहीं रहती। मनुष्य जन्म लेता है, अपने कार्य करता है और फिर एक दिन इस संसार को छोड़कर चला जाता है। सहजोबाई इसे अपनी आँखों के सामने घटित होते देखती हैं, इसलिये वे यह कह रही हैं कि संसार का यह नियम शाश्वत है।

यहरस्ताबहतारहै, थमैनहींछिनएक।
बहुआवैंबहुजातुहै, सहजोआँखनदेख?

इस दोहे में केवल संसार की अस्थिरता का ही वर्णन नहीं है, बल्कि यह भक्ति और वैराग्य की ओर भी संकेत करता है। जब यह संसार, मनुष्य और उसकी

उपलब्धियाँ सब नश्वर हैं, तो व्यक्ति को मोह-माया में नहीं फंसना चाहिए। सहजोबाई ने यहाँ जीवन को एक प्रवाह के रूप में देखा है। नदी की तरह यह रस्ता भी बहता रहता है, और कोई इसे रोक नहीं सकता। संसार में अनगिनत लोग आते-जाते रहते हैं, परंतु कोई भी स्थायी नहीं है। यह प्रकृति का अटूट नियम है, जिसे सभी को स्वीकार करना पड़ता है।

ज्ञानीकोजगझूठहै, अज्ञानीकूँसाँच।
कोटिलालकागदलिखे, सहजोबैठाबाँच।।
अज्ञानीजानतनहीं, लिप्तभयाकरिभोग।
ज्ञानीतौदृष्टाभये, सहजोखुसीनसोग?

इन दोहों में ज्ञान और अज्ञान के बीच के स्पष्ट भेद को दर्शाया गया है। वे बताती हैं कि यह संसार ज्ञानी के लिये असत्य और क्षणभंगुर है, जबकि अज्ञानी इसे ही सत्य मानकर इसमें लिप्त रहता है। ज्ञान और अज्ञान के इस द्वंद्व को वे सहज भाषा में अभिव्यक्त करती हैं और भक्ति तथा वैराग्य की ओर प्रेरित करती हैं। पहले दोहे में सहजोबाई कहती हैं कि एक ज्ञानी व्यक्ति संसार को झूठा और नश्वर मानता है, जबकि अज्ञानी व्यक्ति इसे ही परम सत्य मानकर इसमें आसक्त हो जाता है। वे यह भी संकेत करती हैं कि चाहे संसार के बारे में लाखों ग्रंथ लिख दिए जायें, लेकिन सत्य वही जान सकता है, जो स्वयं इसका अनुभव करता है। ज्ञानी व्यक्ति जीवन की अनित्यता को समझकर संसार के मोह-माया से मुक्त हो जाता है, जबकि अज्ञानी इसे ही वास्तविकता मानकर इसमें उलझा रहता है।

दूसरे दोहे में सहजोबाई ज्ञान और अज्ञान के प्रभाव को और गहराई से समझाती हैं। अज्ञानी व्यक्ति सांसारिक सुखों और भोगों में पूरी तरह लिप्त हो जाता है और इन्हीं को जीवन का उद्देश्य मान लेता है। वह न तो संसार की नश्वरता को समझ पाता है और न ही आत्मज्ञान की ओर अग्रसर होता है। इसके विपरीत, ज्ञानी व्यक्ति संसार को एक नाटक की तरह देखता है। वह साक्षी भाव में स्थित रहता है—न उसे अधिक प्रसन्नता होती है और न ही अधिक दुःख। वह जीवन को समभाव से देखता है और किसी भी परिस्थिति में संतुलन बनाये रखता है। वास्तविक सुख और शांति सांसारिक भोगों में नहीं, बल्कि आत्मज्ञान और भक्ति में है। जब व्यक्ति संसार की क्षणभंगुरता को समझ लेता है, तब वह मोह-माया से मुक्त होकर अपने वास्तविक स्वरूप को पहचानने लगता है।

सहजोबाई की भाषा सादगी और भावप्रवणता से परिपूर्ण है, जो सीधे हृदय को छूने वाली है। उनके काव्यशास्त्र में एक ओर निर्गुण भक्ति परंपरा की सहजता दिखाई देती है, तो दूसरी ओर भाषा और शिल्प में परिपक्वता भी परिलक्षित होती है। सहजोबाई के काव्य की सबसे प्रमुख विशेषता उसकी सहजता और सरलता है। वे आम जनमानस की भाषा में लिखती थीं, जिससे उनके काव्य का प्रभाव सीधे जनता के हृदय तक पहुँचता था। उनकी भाषा में संस्कृतनिष्ठता या अति क्लिष्टता नहीं मिलती, बल्कि उसमें लोकधर्मिता स्पष्ट रूप से दृष्टिगत होती है।

सहजोबाई की भाषा ब्रजभाषा प्रधान है, लेकिन इसमें अवधी के तत्त्व भी दृष्टिगोचर होते हैं। वे अपने समय के अन्य संत कवियों की तरह लोक भाषा को अपनाकर भक्ति साहित्य को व्यापक वर्ग तक पहुँचाने में सक्षम रहीं। उनकी भाषा में ठेठ देशज शब्दावली, सहज मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग मिलता है। उनकी भाषा पर निर्गुण संत परंपरा का गहरा प्रभाव है। कबीर, दादू और रविदास की तरह वे भी सरल, सहज और व्यावहारिक भाषा का प्रयोग करती हैं। उनकी भाषा में कहीं-कहीं रहस्यवाद और प्रतीकात्मकता भी मिलती है, जो उनके काव्य को गहराई प्रदान करता है।

सहजोबाई की भाषा में प्रतीकों और रूपकों का सुंदर प्रयोग मिलता है। वे अपने विचारों को व्यक्त करने के लिये सहज प्रतीकों का उपयोग करती हैं, जिससे उनका काव्य अधिक प्रभावशाली बनता है। उदाहरण के

लिये, संसार को एक झूठे सपने के रूप में प्रस्तुत करना, माया को जल की भाँति बहता हुआ दिखाना आदि।

सहजोबाई ने अपने काव्य में मुख्य रूप से दोहा और साखी छंद का प्रयोग किया है। दोहा उनके काव्य का प्रमुख शिल्प है, जिसमें वे संक्षिप्त और प्रभावशाली ढंग से अपने विचार प्रस्तुत करती हैं। उनकी रचनाएँ अत्यंत गेय हैं, जो संत काव्य परंपरा की एक प्रमुख विशेषता है। उनके भजन और दोहे सहज रूप से गाये जा सकते हैं, जिससे वे भक्ति परंपरा में लोकगीतों की तरह प्रचलित हो गये। उनकी कविताओं में प्रवाह इतना सहज है कि वे गहरे आध्यात्मिक विचारों को भी सरल शब्दों में कहने में सक्षम होती हैं। सहजोबाई के काव्य में तुकांत योजना अत्यंत सहज है। वे तुकांत योजना के साथ-साथ अनुप्रास अलंकार का भी प्रभावी प्रयोग करती हैं, जिससे उनके काव्य में लयात्मकता बनी रहती है। उनके काव्य में सादृश्य अलंकार (उपमा) और विरोधाभास (पैराडॉक्स) का प्रयोग भी मिलता है। वे अपने विचारों को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करने के लिये उपमाओं और विरोधाभास का सहारा लेती हैं। उनकी रचनाओं में लोकधर्मिता का भाव स्पष्ट रूप से झलकता है। वे आम जनमानस की भाषा और उनकी शैली में बात करती हैं, जिससे उनकी कविताएँ अधिक प्रभावशाली और व्यापक बन जाती हैं। उनकी सहजता उनके भक्ति मार्ग की सादगी और सरलता को भी दर्शाती है।

निष्कर्षतः हम यह कह सकते है कि सहजोबाई की रचनाओं में मुक्ति की अवधारणा प्रमुखता से उभरकर आती है। उनके अनुसार, सांसारिक जीवन अस्थायी और मोहजनित बंधनों से भरा हुआ है, जिससे मुक्ति ही अंतिम लक्ष्य है। वे ईश्वर-भक्ति और गुरु-कृपा को इस मुक्ति की प्राप्ति का प्रमुख साधन मानती हैं। उनके पदों में यह विचार स्पष्ट झलकता है। इस प्रकार, सहजोबाई का लेखन न केवल भक्ति और साधना की ओर प्रेरित करता है, बल्कि व्यक्ति को आत्मज्ञान और मुक्ति की दिशा में आगे बढ़ने के लिये भी प्रेरित करता है। उनके काव्य में भाषा की सहजता, शिल्प की सादगी और विचारों की गहराई अद्वितीय है। उनका लेखन संत काव्य परंपरा में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है और आज भी आध्यात्मिक साधकों के लिये प्रेरणास्रोत बना हुआ है।

❑❑❑

शोध छात्र
हिंदी और अन्य भारतीय भाषा विभाग,
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी